भारतीय समाज में अंबेडकर की सामाजिक प्रासंगिकता

राजबली पासवान
शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग,
बी० आर० ए० बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

सारांश –

अंबेडकर का संपूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था। वे अस्पृश्यों तथा दलितों के मसीहा थे। उन्होंने वर्षों से दलित वर्ग को सम्मान पूर्वक जीने के लिए एक सुस्पष्ट मार्ग दिया। उन्हें अपने खिलाफ होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति दी। उनके अनुसार सामाजिक प्रताड़ना राज्य द्वारा दिए जाने वाले दंड से भी कहीं अधिक दुखदाई है। उनके विचार से भारतीय समाज में व्याप्त चतुर्वर्ण व्यवस्था यूनानी विचारक प्लेटो की सामाजिक व्यवस्था के बहुत निकट है। प्लेटो ने व्यक्ति की कुछ विशिष्ट योग्यताओं के आधार पर समाज का विभाजन करते हुए उसे तीन भागों में विभाजित किया। अंबेडकर ने इन दोनों की व्यवस्थाओं की जोरदार आलोचना की तथा स्पष्ट किया कि क्षमता के आधार पर व्यक्तियों का सुस्पष्ट विभाजन ही अवैज्ञानिक तथा असंगत है। अंबेडकर का मत था कि उन्नत तथा कमजोर वर्गों में जितना उग्र संघर्ष भारत में है वैसा विवके किसी अन्य देश में नहीं है। जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विकृति है, जो समाज के लिए बहुत ही घातक है। जाति व्यवस्था के कारण लोगों में एकता की भावना का अभाव है। अतः भारतीयों का किसी एक विषय पर जनमत तैयार नहीं हो सकता। समाज कई भागों में विभक्त हो गया। उनके अनुसार जाति व्यवस्था ना केवल हिंदू समाज को दुष्प्रभावित नहीं किया अपितु भारत के राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक जीवन में भी जहर घोल दिया। अंबेडकर भारतीय समाज में स्त्रियो की हीन दशा से काफी क्षुब्ध थे। उन्होंने उस साहित्य की कटु आलोचना की जिसमें स्त्रियों के प्रति भेद–भाव अपनाया गया। उन्होंने दलितों के उत्थान एवं प्रगति के लिए भी नारी समाज का उत्थान आवश्यक माना। "हिंदू कोड बिल" संसद में प्रस्तुत करते समय हिंदू स्त्रियों के लिए न्याय सम्मत व्यवस्था बनाने के लिए इस विधेयक में व्यापक प्रावधान रखें। भारतीय संविधान के निर्माण के समय में भी उन्होंने स्त्री पुरुष समानता को संवैधानिक दर्जा प्रदान करवाने के गंभीर प्रयास किए।

***कुंजी** : अस्पृश्य, उत्थान, आर्थिक तथा नैतिक, शोषण, संघर्ष*

प्रस्तावना

अंबेडकर का संपूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था। वे अस्पृश्यों तथा दलितों के मसीहा थे। उन्होंने वर्षों से दलित वर्ग को सम्मान पूर्वक जीने के लिए एक सुस्पष्ट मार्ग दिया। उन्हें अपने खिलाफ होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति दी। उनके अनुसार सामाजिक प्रताड़ना राज्य द्वारा दिए जाने वाले दंड से भी कहीं अधिक दुखदाई है। उन्होंने प्राचीन भारतीय ग्रंथों का अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा भी की कि भारतीय समाज में वर्ण–व्यवस्था, जातिप्रथा तथा अस्पृश्यता का प्रचलन समाज में कालांतर में आयी विकृतियों के कारण उत्पन्न हुए हैं, न कि यह यहां के समाज में प्रारंभ से ही विधमान थी। उन्होंने दलित वर्ग पर होने वाले अन्याय का ही विरोध नहीं किया अपितु उनमें आत्म–गौरव, स्वावलम्बन, आत्मविवास, आत्मसुधार और आत्मविश्लेषण करने की शक्ति प्रदान की। दलित उद्धार के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास सराहनीय है। आधुनिक भारत के निर्माण में उनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। पंडित नेहरू के शब्दों में "डाक्टर अंबेडकर, हिंदू समाज की दमनकारी प्रवृतियों के विरुद्ध किए गए विद्रोह का प्रतीक थे।"

वर्ण व्यवस्था का विरोध :– भारतीय आर्यों के सामाजिक संगठन का आधार चतुर्वर्ण व्यवस्था रहा है। इस आधार पर समाज को अपने कार्य के आधार पर चार भागों में विभाजित कर रखा था। अंबेडकर ने इस व्यवस्था को और अवैज्ञानिक, अत्याचार पूर्ण, संकीर्ण, गरिमाहिन बताते हुए इसकी कटुआलोचना की। उनके अनुसार यह श्रम के विभाजन पर आधारित न होकर श्रमिकों के विभाजन पर आधारित था। उनके विचार से भारतीय समाज में व्याप्त चतुर्वर्ण व्यवस्था यूनानी विचारक प्लेटो की सामाजिक व्यवस्था के बहुत निकट है। प्लेटो ने व्यक्ति की कुछ विशिष्ट योग्यताओं के आधार पर समाज का विभाजन करते हुए उसे तीन भागों में विभाजित किया। अंबेडकर ने इन दोनों की व्यवस्थाओं की जोरदार आलोचना की तथा स्पष्ट किया कि क्षमता के आधार पर व्यक्तियों का सुस्पष्ट विभाजन ही अवैज्ञानिक तथा असंगत है। अंबेडकर का मत था कि उन्नत तथा कमजोर वर्गों में जितना उग्र संघर्ष भारत में है वैसा विवके किसी अन्य देश में नहीं है। ऐतिहासिक आधारों पर अंबेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि शुद्रो की उत्पत्ति तथा हीनता का कारण वे स्वयं न होकर ब्राह्मणों का जान–बूझकर किया गया प्रयास था।

जातिप्रथा का विरोध :– अंबेडकर ने भारत में जातिव्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं और लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयास किया जिनमें प्रमुख रूप से चतुर्वर्ण पदसोपानीय रूप में वर्गीकृत है। जातीय आधार पर वर्गीकृत इस व्यवस्था को व्यवहार में व्यक्तियों के द्वारा परिवर्तित करना असंभव है। इस व्यवस्था में कार्यकुशलता की हानि होती है, क्योंकि जातिय आधार पर व्यक्तियों के कार्यों का पूर्व में ही निर्धारण हो जाता है। यह निर्धारण भी उनके प्रशिक्षण अथवा वास्तविक क्षमता के आधार पर न होकर जन्म तथा माता–पिता के सामाजिक स्तर के आधार पर होता है। इस व्यवस्था से सामाजिक स्थैतिकता पैदा होती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने वंशानुगत व्यवस्था का अपनी स्वेच्छा से परिवर्तन नहीं कर सकता। यह व्यवस्था संगीन प्रवृत्तियों को जन्म देती है, क्योंकि हर व्यक्ति अपनी जाति के अस्तित्व के लिए अधिक जागरूक होता है, अन्य जातियों के सदस्यों से अपने संबंध मजबूत करने की कोई भावना नहीं होती है। परिणाम स्वरूप उनमें राष्ट्रीय जागरूकता की भी कमी उत्पन्न होती है। जाति के पास इतने अधिकार हैं कि वह अपने किसी भी सदस्य से उसके नियमों के उल्लंघन पर दण्डित या समाज से बहिष्कृत कर सकता है। अंतरजातीय विवाह इस व्यवस्था में निषेध होते है। सामाजिक विद्वेष और घृणा का प्रसार इस व्यवस्था की सबसे बुरी विशेषता है। इस प्रकार अंबेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विकृति है, जो समाज के लिए बहुत ही घातक है। जाति व्यवस्था के कारण लोगों में एकता की भावना का अभाव है। अतः भारतीयों का किसी एक विषय पर जनमत तैयार नहीं हो सकता। समाज कई भागों में विभक्त हो गया। उनके अनुसार जाति व्यवस्था ना केवल हिंदू समाज को दुष्प्रभावित नहीं किया अपितु भारत के राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक जीवन में भी जहर घोल दिया।

अस्पृश्यता का विरोध :– अंबेडकर ने हिंदू समाज में प्रचलित अस्पृश्यता को अन्यायपूर्वक मानते हुए प्रबल विरोध किया। उनके अनुसार ब्राह्मणों और शुद्र शासको में अंतर्द्वंद के कारण शुद्रो का जन्म हुआ जबकि प्रारंभ में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीन वर्ण ही हुआ करते थे। शनैः–शनैः ब्राहमणवाद का समाज में वर्चस्व स्थापित हो गया तथा समाज में उनके द्वारा प्रतिपादित नियमों को मानना आवश्यक माना गया। उन्होंने विभिन्न ऐतिहासिक उदाहरणों के द्वारा यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि अस्पृश्यता के बने रहने के पीछे कोई तार्किक, सामाजिक अथवा व्यावसायिक आधार नहीं है। अतः उन्होंने इस व्यवस्था का जोरदार शब्दों में खंडन किया। उनका दृष्टिकोण था कि यदि हिंदू समाज का उत्थान करना है तो अस्पृश्यता का जड़ से निराकरण आवश्यक है। अंबेडकर ने अस्पृश्यता के निराकरण के लिए केवल सैद्धांतिक दृष्टिकोण ही प्रस्तुत नहीं किया अपितु उन्होंने अपने विभिन्न आंदोलनों व कार्यों से लोगों में चेतना जागृत करने एवं इसके निराकरण के लिए विभिन्न सुझाव भी प्रेरित किए। उन्होंने अस्पृश्यता निराकरण के लिए सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, शैक्षणिक

आदि रचनात्मक कार्यक्रम तथा संगठित अभियान का आग्रह किया। अस्पृश्यो तथा दलितों के उद्धार के लिए अंबेडकर ने कई महत्वपूर्ण सुझावों को समाज के सामने परिलक्षित किया।

हिंदू समाज की मान्यताओं में परिवर्तन पर बल :– अंबेडकर हिंदू समाज तथा हिंदू धर्म की उन आधारभूत मान्यताओं के विरुद्ध थे, जिनके कारण अस्पृश्यता जैसी संकीर्णता का जन्म होता है। उनका मानना था कि हिंदू समाज में स्वतंत्रता, समानता तथा न्याय पर आधारित व्यवस्था स्थापित करने के लिए कठोर नियमों में संशोधन आवश्यक है। उन्होंने इसके लिए धार्मिक कार्यों के लिए ब्राह्मणों के एकाधिकार को समाप्त करने का आग्रह किया। उनके अनुसार उन शास्त्रों को अधिकारिक नहीं माना जाना चाहिए जो सामाजिक अन्याय का समर्थन करते हैं।

अंतरजातीय विवाह का समर्थन :– अंबेडकर का मानना था कि हिंदू समाज के उत्थान के लिए जातीय बंधन समाप्त किया जाना आवश्यक है। उनके मत में इसके लिए यह आवश्यक है कि समाज के विभिन्न जातियों के लोगों के मध्य अंतरजातीय विवाह होने लगेगा तो जाति व्यवस्था का बंधन स्वतः शिथिल होने लगेगा, क्योंकि विभिन्न जातियों के मध्य रक्त के मिलने से अपनत्व की भावना पैदा होगी। उन्होंने स्वयं अंतरजातीय विवाहों को प्रोत्साहित किया। जब कभी इस प्रकार के अवसर उन्हें मिलते तो वे उनमें अवश्य ही सम्मिलित होते थे।

दलितों की शिक्षा और संगठन पर बल :– अंबेडकर का विश्वास था कि दलितों के उत्थान में केवल उच्च वर्णों की सहानुभूति और सद्भावना ही पर्याप्त नहीं है। उनका मत था कि दलितों का तो वास्तव में तब उत्थान होगा जब वे स्वयं सक्रिय तथा जागृत होंगे। इसलिए उन्होंने घोषणा की कि शिक्षित बनो, आंदोलन चलाओ और संगठित रहो। दलित वर्ग की शिक्षा के बारे में अंबेडकर का मत था कि दलितों के अत्याचार तथा उत्पीड न सहन करने तथा वर्तमान परिस्थितियों को संतोषपूर्ण मानकर स्वीकार करने की प्रवृति का अंत करने के लिए उन में शिक्षा का प्रसार आवश्यक है। शिक्षा के माध्यम से ही उन्हें इस बात का आभास होगा कि विष्व कितना प्रगतिशील है तथा वह कितने पिछड़े हुए हैं। उनका मानना था कि दलितों को अन्याय, अपमान तथा दबाव को सहन करने के लिए मजबूर किया जाता है। वे इस बात से दुःखी थे कि दलित इस प्रकार की परिस्थितियों को बिना कुछ कहे स्वीकार कर लेते हैं, जबकि यदि एक अकेली चींटी पर भी पैर रख दिया जाए तो वह प्रतिरोध करते हुए काट डालती है। इन परिस्थितियों को समाप्त करने के लिए अंबेडकर दलितों में शिक्षा के प्रसार को बहुत महत्वपूर्ण मानते थे। उन्हें केवल औपचारिक शिक्षा ही नहीं अपितु अनौपचारिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए।

व्यवस्थापिका में दलित वर्ग के पर्याप्त प्रतिनिधित्व का समर्थन :– अंबेडकर का मानना था दलित वर्ग को अपने हितों की रक्षा के लिए विधायी कार्यों को अपने पक्ष में प्रभावित करने के लिए राजनीतिक सत्ता में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। अतः उनका सुझाव था कि केंद्रीय तथा प्रांतीय विधान मंडलों में दलितों की भागीदारी हेतु पर्याप्त प्रतिनिधित्व के लिए कानून बनाया जाना चाहिए। इसी प्रकार उनका मानना था कि निर्वाचन कानून बनाकर यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि प्रथम दस वर्ष तक दलित वर्ग के व्यस्क मताधिकारियो द्वारा पृथक निर्वाचन के माध्यम से अपने प्रतिनिधि का निर्वाचन किया जाना चाहिए तथा बाद में दलित वर्ग हेतु आरक्षित स्थानों पर संबंधित निर्वाचन क्षेत्र के सभी व्यस्क मताधिकारियो द्वारा निर्वाचन किया जाना चाहिए।

सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधि की मांग :– अंबेडकर का मत था की दलित वर्ग के उत्थान के लिए यह भी आवश्यक है कि उन्हें सरकारी सेवाओं में प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए। उनके अनुसार इसके लिए दलित वर्ग हेतु आरक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। उनके अनुसार दलित वर्ग को सेवाओं में पर्याप्त स्थान दिलाए जाने के लिए सरकार को विशेष संवैधानिक तथा कानूनी प्रावधान करने चाहिए।

कार्यपालिका में पर्याप्त प्रतिनिधि की मांग :– डा. अंबेडकर का मानना था की दलित वर्ग को नीति निर्माण के कार्यो में उचित अवसर के लिए मंत्रिमंडलो में भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। उनको भय था की बहुमत के शासन में दलित वर्ग के हितों तथा अधिकारों की उपेक्षा होने की संभावना हो सकती है। किंतु यदि दलित वर्ग को कार्यपालिका में जब पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलेगा तो वह अपने अधिकारों तथा हितों के प्रति होने वाली अपेक्षा को समाप्त करने में सक्षम होगा तथा अपने विकास के लिए विशेष नीतियों का निर्माण कर रचनात्मक कार्यक्रमों को शासन के माध्यम से सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है। अंबेडकर को अस्पृश्य लोगों के प्रति हिंदू समाज के व्यवहार से काफी ठेस लगी अतः वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दलितों को अपने सम्मान को बचाए रखने के लिए हिंदू धर्म को अंतिम हथियार के रूप में त्याग देना चाहिए। किंतु उनका मानना था कि भारत में इस्लाम और ईसाई धर्मों का भी दलितों के प्रति दृष्टिकोण न्यायपूर्वक नहीं है, अतः दलितों को भारत में प्रचलित एक अन्य धर्म बौद्ध धर्म को अपना लेना चाहिए। उनका विष्वास था कि बौद्ध धर्म सामाजिक असमानता को समाप्त कर मातृत्व की भावना विकसित करता है। यही कारण था कि अंबेडकर ने अपने जीवन के अंतिम दिनों में बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था। इस संदर्भ में अंबेडकर के विचार महात्मा गांधी के विचारों से मेल नहीं खाते थे। महात्मा गांधी का यह दृढ़ विष्वास था कि धर्म परिवर्तन करने मात्र से दलित वर्गों की स्थिति में वास्तविक सुधार होगा ही, इसकी कोई निश्चितता नहीं है।

नारी गरिमा का समर्थन :– अंबेडकर भारतीय समाज में स्त्रियो की हीन दशा से काफी क्षुब्ध थे। उन्होंने उस साहित्य की कटुआलोचना की जिसमें स्त्रियों के प्रति भेद–भाव अपनाया गया। उन्होंने दलितों के उत्थान एवं प्रगति के लिए भी नारी समाज का उत्थान आवश्यक माना। उनका मानना था कि स्त्रियों के संपूर्ण सम्मानपूर्वक तथा स्वतंत्र जीवन के लिए शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। अंबेडकर ने हमेशा स्त्री पुरुष समानता का व्यापक समर्थन किया। यही कारण है कि उन्होंने स्वतंत्र भारत के प्रथम विधिमंत्री रहते हुए "हिंदू कोड बिल" संसद में प्रस्तुत करते समय हिंदू स्त्रियों के लिए न्याय सम्मत व्यवस्था बनाने के लिए इस विधेयक में व्यापक प्रावधान रखें। भारतीय संविधान के निर्माण के समय में भी उन्होंने स्त्री पुरुष समानता को संवैधानिक दर्जा प्रदान करवाने के गंभीर प्रयास किए।

निष्कर्ष : अंबेडकर के सामाजिक चिंतन में अस्पृश्यों, दलितों तथा शोषित वर्ग के उत्थान के लिए काफी दर्शन झलकता है। वे उनके उत्थान के माध्यम से एक ऐसा आदर्श समाज स्थापित करना चाहते थे जिसमें समानता, स्वतंत्रता तथा मातृत्व के तत्व समाज के आधारभूत सिद्धांत हों। डाक्टर अंबेडकर एक महान सुधारक थे जिन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित अन्यायपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन तथा सामाजिक न्याय की स्थापना के जबरदस्त प्रयास किए। उन्होंने दलितों, पिछड़ों, अस्पृश्यों के विरुद्ध सदियों से हो रहे अन्याय का न केवल सैद्धांतिक रूप से विरोध किया अपितु अपने कार्य कलापों, आंदोलनों के माध्यम से उन्होंने शोषित वर्ग में आत्मबल तथा चेतना जागृत करने का सराहनीय प्रयास किया।

संदर्भ सूची :

[1] सी. एम. ल० जो, डॉक्टर अंबेडकर : लोकतंत्र की महिमा (1984)

[2] राजेंद्र मोहन भटनागर, डॉक्टर अंबेडकर दर्शन (1990)

[3] मोवाली चंद्रा, भीमराव अंबेडकर : मानव व उसकी दृष्टि (1990)

[4] सी. एस. भंडारी, भीमराव अंबेडकर : एक अच्छे देशभक्त (1991)

[5] मधु लिन्यें, बाबा साहब अंबेडकर : एक चिंतन (1991)

[6] विष्णु दत्त नागर, डॉक्टर अंबेडकर के आर्थिक विचार और नीतियां (1995)

[7] बी. आर. घातक, डाक्टर अंबेडकर के विचार (1997)

[8] ए. के. मजूमदार, अंबेडकर और सामाजिक न्याय (1997)

[9] डी. आर. जाटव, डॉक्टर अंबेडकर : एक प्रखर विद्रोही (2004)